Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

पूर्व मध्यकालीन बिहार में कृषि अर्थव्यवस्था : एक अध्ययन

डॉ0 रामलखन सिंह
पूर्व शोध छात्र, इतिहास विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत।

सारांश – पूर्व मध्यकालीन बिहार में उतर भारत के अन्य क्षेत्रों की तरह कृषि प्रधान पेशा था। यह लोगों की आजीविका मुख्य साधन था। पुनः कृषि उत्पादन की समस्त प्रक्रिया से लोग अवगत थे । उन्हें अच्छें बीजों की गुणवता की जानकारी, भूमि प्रकार की जानकारी, फसों के दृष्टिकोण से भूमि उपयुक्तता की जानकारी, विभिन्न प्राकृतिक खादों की जानकारी, शल्य–परिवर्तन की जानकारी, कृषि–यांत्रिकी की जानकारी, कृषि–प्रक्रिया की जानकारी स्पष्ट रूप से थी। सिंचाई साधनों एवं सिंचाई की महत्ता से भी वे अवगत थे। अतः कुल मिलाकर इस काल में कृषि की बेहतर स्थिति का निष्कर्ष निकलता है।

मुख्य शब्द– पूर्व मध्यकालीन, बिहार, कृषि, अर्थव्यवस्था, इतिहास, भूमि, सिंचाई।

कृषि अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण पक्ष है। इतिहास के किसी भी कालखंड में अर्थव्यवस्था का आधार कृषि ही होती है। इसका कारण यह है कि कृषि की बेहतर स्थिति से ही जीवनयापन की स्थिति परिलक्षित होती है। पुनः कृषि अर्थव्यवस्था के अन्य पक्षों का आधार स्तंभ होता है। शिल्प एवं वाणिज्य– व्यापार के विकास की स्थिति भी कृषि पर ही निर्भर करती है। क्योंकि कृषि वाणिज्य व्यापार के मांग पक्ष एवं पूर्ति पक्ष दोनों की पूर्ति करती है। कृषि अवशेष की स्थिति से ही वाणिज्य व्यापार का सर्वप्रथम उदय हुआ। पुनः भारतीय इतिहास में नगरीकरण, मुद्रा–अर्थव्यवस्था के उदय और दूसरी ओर राजनीतिक एकीकरण की पृष्ठभूमि निर्मित होने में कृषि की भूमिका सर्वाधिक उल्लेखनीय रही है।[1] अतः अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण एवं सूक्ष्म विश्लेषण हेतु कृषि की स्थिति का अध्ययन आधारभूत उपागम है।

पूर्व मध्यकालीन बिहार की अर्थव्यवस्था के अध्ययन के अंतर्गत कृषि एक महत्वपूर्ण उपागम है। पूर्व मध्यकालीन बिहार की अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व को समझना आवश्यक है क्योंकि यह दौर सामंतवादी व्यवस्था से अभिन्न रूप से जुड़ा है और जाहिर है कि सामंतवादी व्यवस्था भूमि और भू–राजस्व के क्षैतिज एवं उर्ध्वाधर विभाजन से संबंधित होता है।[2] आमतौर पर सामंतवादी व्यवस्था को बंद अर्थव्यवस्था समझा जाता है, जिसमें आर्थिक लेन–देन का व्यवहार ठप हो जाता है और स्थानीय उत्पादन एवं स्थानीय उपभोग का पूर्ववर्ती ढांचा कार्यरत हो जाता है।[3] इसलिए यह माना जाता है कि बिहार के इतिहास के इस कालखंड में प्रभुसत्ता का विभाजन स्पष्ट

था। यहॉ पहले से चले आ रहे सामंती अनुदानों के अतिरिक्त बाह्य सत्ता के सामंतों के रूप में शासन एवं भूमि पर नियंत्रण की अनियंत्रित प्रक्रिया देखी जा सकती है।

उपरोक्त विवरण यह दिखाता है कि बिहार की राजनैतिक स्थिति का इस काल में पूर्णतः सामंती ढांचे में विखंडित था। लेकिन इस राजनैतिक स्थिति में कृषि एवं भू राजस्व की स्थिति और कृषि उत्पाद पर नियंत्रण की स्थिति अभिन्न रूप से सामंतों के इस दायित्व से जुड़ा है। इसके अतिरिक्त कृषि के बेहतर ''अधिशेष '' की संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि कई सामंत इस संभावना पर नियंत्रण कर ही उस स्थिति में पहुंचने की क्षमता रखते थे जिसमें वह स्वतंत्र राजनीतिक सत्ता का उपभोग कर सके। जैसा कि हमें पूर्ववर्ती काल में महासामंतधिपति नान्यादेव का उदाहरण मिलता है, कि कर्णाट चालुक्य राजा विक्रमादित्य VI के सामंत थे और बाद में मिथिला में स्तवंत्र वंश की स्थापना करने में सफल रहे।[4]

इस काल में कृषि की बेहतर स्थिति का प्रमाण हम शासकों के विजयी अभियान के समय को ध्यान में रखकर भी प्राप्त कर सकते है। उल्लेखनीय है कि शासक अपना विजय अभियान सामान्यतः विजय दशमी अर्थात अश्विनी माह के शुक्ल पक्ष के दसवीं तिथि को आरंभ करते थे।[5] इसका कारण था कि इस समय खेतों में खरीफ धान लगा होता था। लक्ष्मीघर ने 'नियतकला कांड'[6] में जो नवान्न पर्व का विवरण दिया है उससे पता चलता है कि आज से 800–900 वर्ष पूर्व धान की उपज आज के समय से एक महीने पहले ही तैयार जाता था। इससे यह पता चलता है कि कृषि उपज को ध्यान में रखकर ही सैन्य अभियान की रणनीति बनायी जाती थी ताकि सैनिकों एवं सवारों को अभियान के समय पर्याप्त मात्रा में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित किया जा सके।[7] इससे हमें यह साक्ष्य प्राप्त हो जाता है कि उस काल में कृषि उपज में प्राचीन काल से चली आ रही समृद्धि की निरंतरता विद्यमान थी।

इस प्रकार बिहार में पूर्व काल से ही कृषि की स्थिति सुदृढ रही है और यह धारा पूर्व मध्य काल में भी जारी रही। इस समय के कई स्रोत उपलब्ध है जो बेहतर कृषि स्थिति के बारे में हमें आधिकारिक जानकारी उपलब्ध कराते है। इस समय के कई विधि ग्रंथ उल्लेखनीय है जिनमें प्रमुख हैं– गोविन्दचनद्र गहड़वाल जिनका शासन कुछ समय के लिए बिहार के कुछ भागों में रहा, के मंत्री लक्ष्मीधर द्वार रचित कृत्यकल्पतरू।[8] यह 14 कांडों में है। इसके कुछ कांड कृषि एवं अन्य आर्थिक व्यवस्था के बारे में सूचना उपलब्ध कराता है। इस काल में सिंचाई सुविधा पर पर्याप्त ध्यान दिया गया । इस संदर्भ में हमें विभिन्न सिंचाई प्रयासों का उल्लेख मिलता है। मेघातिथि[9] कहते है कि वर्षा ऋतु में वर्षा होती है, लेकिन गलत कार्यो के कारण जो राजा एवं राज्य के गलती के कारण कभी–कभी राज्य में सुखा पड़ता है । इसलिए राजा इस धारणा के कारण कुंए, नहर और तालाब खुदाई करवाते हैं।

जहॉ तक विभिन्न कृषि उत्पादों का प्रश्न है हमें ज्ञात है कि वाजसनेय संहिता के समय से ही उतर भारत का मुख्य फसल रहा है–चावल, यव, गेंहू और दान जैसे मुदग, मसूर, मास आदि।[10] 'निदान' ग्रंथ के प्रसिद्ध रचयिता माधवकर ने अपनी रचना 'पर्यायरत्नमाला' में विभिन्न कृषि उत्पादों का विस्तारपूर्वक विवरण दिया है। इसका संपादन और प्रकाशन पहली बार डॉ0 टी0पी0 चौधरी द्वारा पटना विश्वविद्यालय जर्नल में किया गया है।[11] इस

रचना में हमें विभिन्न प्रकार के फसलों की जानकारी मिलती है जैसे–व्रिही (चावल), आसुव्रिही (चावल),प्रियांगु (चावल), कंगानी (चावल), गोधुम (गेंहू), मुदग (दाल), कलाय (दाल), कुलट्ठा (चना) आदि। चावल बिहार सहित उतर भारत का प्रमुख खाद्य फसल रहा है।

खाद्य फसलों के अतिरिक्त इस काल में गैर–खाद्य फसल भी वृहत् भाग में उपजाये जाते थे। गैर खाद्य वाणिज्यिक फसलों में कपास और ईख महत्वपूर्ण थे।[12] कपास की खेती बंगाल की सीमा से लगे बिहार के पूर्वी क्षेत्र में पूर्णिया और भागलपुर के कुछ अंचलों में होता था। इसी प्रकार ईख का उत्पादन भी यहॉ वृहत मात्रा में होता था। ईख से बने मिठाईयॉ 'इदनकुंड' का उल्लेख मिलता है।[13] ईख के अतिरिक्त अफीम और नील की खेती भी होती थी।

भूमि एवं मिट्टी की जानकारी के अलावे लोग मिट्टी को उपजाउ बनाने और उसे कायम रखने हेतु विभिन्न प्रकार के खादों के प्रयोग से भी अवगत थे। कृषिपरासर में यह उल्लेख है कि बिना खाद के प्रयोग के धान का पौधा सिर्फ वृद्धि कर सकता है, फसल नहीं दे सकता है।[14] उस समय गाय का गोबर मुख्यतः खाद के रूप में प्रयुक्त किया जाता था। कृषि पराशर में गोबर का खाद बनाने की तकनीक का विवरण उपलब्ध है।[15] इसमें उल्लेख मिलता है कि गोबर के टीले का पहले माघ महीने में पूजा करनी चाहिए, फिर किसी शुभ दिन पर इसे सूर्य की तेज में सुखाना चाहिए, फिर इसका छोटा–छोटा गोला बनाना चाहिए, फिर फाल्गुन महीने में खेतों में किये गये गड्ढों में डालना चाहिए। इसके बाद बीज बोने के समय उस खाद को पूरे खेत में फैला देना चाहिए। इस विधि का आज वैज्ञानिक समर्थन किया जाता है। आज भी गाय के गोबर का जैविक खाद के रूप में इस्तेमाल होता है।

कृषि में बीज की गुणवता का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि बीज की गुणवता ही अच्छा फसल सुनिश्चित कर सकता था। आज की तरह उस समय भी अच्छे बीजों के बारे में लोगों को जानकारी थी और लोग बीज को गुणवतापूर्ण बनाने की विधि के बारे में भी अवगत थे। यह उस समय के साहित्यिक स्रोतों से प्रमाणित होता है। कृषिपरासर के अनुसार यदि बीज अनुर्वर होता है तो उत्पादन में अन्य कारकों की भूमिका का कोई महत्व नहीं रह जाता है। इसलिए की बीज ही पौधे के जड़ में होता अर्थात उत्पादन का मूल होता है इसलिए बीज पर सर्वाधिक ध्यान केंद्रित करना चाहिए।[16]

किसान खेती के यंत्रों की वैज्ञानिकता से भी परिचित थे। कृषि परासर के अनुसार यंत्रों को ठोस और मजबूत होना चाहिए, अन्यथा किसान खेती के प्रत्येक चरण में कठिनाई अनुभव करेंगे।[17] उस समय हल के विभिन्न अंशों और उसके माप के बारे में भी किसानों की अच्छी जानकारी थी। उस समय हल के विभिन्न अंशों के विभिन्न नामों यथा– युग, ऊडुकल, योत्र, रज्जू, ईसा, निश्योला, सौला, आबद्दा, फाल, हलष्यानु आदि शब्दों से यह प्रमाणित होता है।[18]

उस समय खेत जुताई के लिए हल के साथ–साथ बैलों की महत्ता का भी तत्कालीन ग्रंथों में उल्लेख किया गया है। अच्छे हलों की गुणवता खींचने वाले बैलों पर ही निर्भर करता है। वृहत परासर में बैलों की कृषि उत्पाद में भूमिका पर बहुत प्रकाश डाला गया है।[19] इसमें उल्लेख किया गया है कि संसार अनाजों एवं फसलों

पर निर्भर करता है, जिसका उत्पादन बैलों के सहयोग से होता है। बैल वास्तव में पूजा के विषय है। एक बैल का पालन–पोषण ऋषियों द्वारा बताये गये एक गाय का पालन– पोषण द्वारा प्राप्त पुण्यों की तुलना में दस गुणा अधिक होती है। इसलिए पालन –पोषण पूरी सावधानी से करना चाहिए। जो व्यक्ति बिना उसकी सुविधा एवं सुरक्षा का ख्याल रखे उसे हलों में जोतता है वह नरक का भागी होता है। इसी प्रकार कृषिपरासर[20] में उल्लेख है कि जो व्यक्ति एक हल में आठ बैलों का प्रयोग करता है वह सर्वश्रेष्ठ है, जो छः बैलों को जोतता है वह व्यापारी है, जो चार बैलों को जोतता है वह निष्ठुर है और जो दो बैलों केा जोतता है वह मांस खानेवाला है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि पूर्व मध्यकालीन बिहार में उतर भारत के अन्य क्षेत्रों की तरह कृषि प्रधान पेशा था। यह लोगों की आजीविका मुख्य साधन था। पुनः कृषि उत्पादन की समस्त प्रक्रिया से लोग अवगत थे । उन्हें अच्छें बीजों की गुणवता की जानकारी, भूमि प्रकार की जानकारी, फसों के दृष्टिकोण से भूमि उपयुक्तता की जानकारी, विभिन्न प्राकृतिक खादों की जानकारी, शल्य–परिवर्तन की जानकारी, कृषि–यांत्रिकी की जानकारी, कृषि–प्रक्रिया की जानकारी स्पष्ट रूप से थी। सिंचाई साधनों एवं सिंचाई की महत्ता से भी वे अवगत थे। अतः कुल मिलाकर इस काल में कृषि की बेहतर स्थिति का निष्कर्ष निकलता है।

संदर्भ एवं पाद–टिप्पणी

1. रामशरण शर्मा, प्रारंभिक भारत का परिचय, ओरियेंट लोगमेन, दिल्ली 2004, पृ0–148
2. डी0एन0झा0, प्राचीन भारत का इतिहास, मनोहर, दिल्ली, पृष्ठ–68
3. बी0डी0 चट्टोपाध्याय, द मेकिंग ऑफ अर्ली मिडियेवल इंडिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1994 , नई दिल्ली, पृष्ठ–78
4. वी0पी0 मजुमदार, सोशियो इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ नॉदर्न इंडिया (1030–1194 A.D), फर्मा के0एल0 मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1960, पृष्ठ–9
5. वही 6. वही
7. राजनीतिरत्नाकर (संपादित), पृ0 4
8. बी0पी0 मजुमदार, पूर्वोक्त, पृ 30
9. कुमार अमरेन्द्र, पुरातत्व एवं बिहार, पटना 2004, पृ 38
10. मनुस्मृति पर टीका, मेघातिथि, 1 ,30
11. पटना विश्वविालय जर्नल खंड–2, (1945–46)
12. राजतरंगिणी, कल्हण, VII, 758
13. अपरार्क की टीका, याज्ञवल्क्य स्मृति, 1,पृ0 212
14. वहीं
15. कृषि परासर, (सं0जी0पी0 मजुमदार और एस0सी0 बनर्जी, कलकत्ता 1960) पृ 48
16. परासंहिता, II, 3–4.
17. वही
18. वहीं
19. वृहत् परासर, अध्याय–3
20. मेघतिथि की टीका, VIII, 243